॥ श्रीहरिः ॥

ध्यान और मानसिक पूजा

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

जयदयाल गोयन्दका

॥ श्रीहरिः ॥

विषय-सूची

ध्यान और मानसिक पूजा

साकार और निराकार दोनोंहीकी उपासनाओंमें ध्यान सबसे आवश्यक और महत्त्वपूर्ण साधन है। श्रीभगवान्‌ने गीतामें ध्यानकी बड़ी महिमा गायी है। जहाँ-कहीं उनका उच्चतम उपदेश है, वहीं उन्होंने मनको अपनेमें (भगवान्‌में) प्रवेश करा देनेके लिये अर्जुनके प्रति आज्ञा की है। योगशास्त्रमें तो ध्यानका स्थान बहुत ऊँचा है ही। ध्यानके प्रकार बहुत-से हैं। साधकको अपनी रुचि, भावना और अधिकारके अनुसार तथा अभ्यासकी सुगमता देखकर किसी भी एक स्वरूपका ध्यान करना चाहिये। यह स्मरण रखना चाहिये कि निर्गुण-निराकार और सगुण-साकार भगवान् वास्तवमें एक ही हैं। एक ही परमात्माके अनेक दिव्य प्रकाशमय स्वरूप हैं। हम उनमेंसे किसी भी एक स्वरूपका आश्रय लेकर परमात्माको पा सकते हैं; क्योंकि वास्तवमें

परमात्मा उससे अभिन्न ही हैं। भगवान्‌के परम भावको समझकर किसी भी प्रकारसे उनका ध्यान किया जाय, अन्तमें प्राप्ति उन एक ही भगवान्‌की होगी, जो सर्वथा अचिन्त्यशक्ति, अचिन्त्यानन्त-गुणसम्पन्न, अनन्तदयामय, अनन्तमहिम, सर्वव्यापी, सृष्टिकर्ता, सर्वरूप, स्वप्रकाश, सर्वात्मा, सर्वद्रष्टा, सर्वोपरि, सर्वेश्वर, सर्वज्ञ, सर्वसुहृद्, अज, अविनाशी, अकर्ता, देशकालातीत, सर्वातीत, गुणातीत, रूपातीत, अचिन्त्यस्वरूप और नित्य स्वमहिमामें ही प्रतिष्ठित, सदसद्विलक्षण एकमात्र परम और चरम सत्य हैं। अतएव साधकको इधर-उधर मन न भटकाकर अपने इष्टरूपमें महान् आदर-बुद्धि रखते हुए परम भावसे उसीके ध्यानका अभ्यास करना चाहिये।

श्रीमद्भगवद्गीताके छठे अध्यायके ग्यारहवेंसे तेरहवें श्लोकतकके वर्णनके अनुसार एकान्त,

पवित्र और सात्त्विक स्थानमें सिद्ध, स्वस्तिक, पद्मासन या अन्य किसी सुख-साध्य आसनसे बैठकर नींदका डर न हो तो आँखें मूँदकर, नहीं तो आँखोंको भगवान्‌की मूर्तिपर लगाकर अथवा आँखोंकी दृष्टिको नासिकाके अग्रभागपर जमाकर प्रतिदिन कम-से-कम तीन घंटे, दो घंटे या एक घंटे—जितना भी समय मिल सके—सावधानीके साथ लय, विक्षेप, कषाय, रसास्वाद, आलस्य, प्रमाद, दम्भ आदि दोषोंसे बचकर श्रद्धा-भक्तिपूर्वक तत्परताके साथ ध्यानका अभ्यास करना चाहिये। ध्यानके समय शरीर, मस्तक और गला सीधा रहे और रीढ़की हड्डी भी सीधी रहनी चाहिये। ध्यानके लिये समय और स्थान भी सुनिश्चित ही होना चाहिये।

ऊपर लिखे अनुसार एकान्तमें आसनपर बैठकर साधकको दृढ़ निश्चयके साथ नीचे लिखी धारणा करनी चाहिये—

निर्गुण-निराकारका ध्यान

(१)

एक सत्य, सनातन, असीम, अनन्त विज्ञानानन्दघन पूर्णब्रह्म परमात्मा ही परिपूर्ण हैं। उनके सिवा न तो कुछ है, न हुआ और न होगा। उन परब्रह्मका ज्ञान भी उन परब्रह्मको ही है; क्योंकि वे ज्ञानस्वरूप ही हैं। उनके अतिरिक्त और जो कुछ भी प्रतीत होता है, सब कल्पनामात्र है। वस्तुतः वे ही वे हैं।

इसके अनन्तर चित्तमें जिस वस्तुका भी स्फुरण हो, उसीको कल्पनारूप समझकर उसका त्याग (अभाव) कर दे। एक परमात्माके सिवा और किसीकी भी सत्ता न रहने दे। ऐसा निश्चय करे कि जो कुछ प्रतीत होता है, वह वस्तुतः है नहीं। स्थूल शरीर, ज्ञानेन्द्रिय,

मन, बुद्धि आदि कुछ भी नहीं है। यों अभाव करते-करते सबका अभाव हो जानेपर अन्तमें सबका अभाव करनेवाली एक बुद्धिकी शुद्ध वृत्ति रह जाती है। परंतु अभ्यासकी दृढ़तासे दृश्यप्रपंचका सुनिश्चित अभाव होनेपर आगे चलकर वह भी अपने-आप ही शान्त हो जाती है। उस बुद्धिको शुद्ध वृत्तिका त्याग करना नहीं पड़ता, अपने-आप ही हो जाता है। यहाँ त्याग, त्यागी और त्याज्यकी कल्पना सर्वथा नहीं रह जाती। इसीलिये वृत्तिका त्याग किया नहीं जाता, वह वैसे ही हो जाता है, जैसे ईंधनके अभावमें आगका। इसके अनन्तर जो कुछ बच रहता है, वही विज्ञानानन्दघन परमात्मा है। वह असीम, अनन्त, नित्य बोधस्वरूप, सत्य और केवल है। वही '**सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म**' है। वह परम आनन्दमय है।

परिपूर्ण ज्ञानानन्दमय है, परंतु वह आनन्द-स्वरूप बुद्धिगम्य नहीं है, अचिन्त्य है—केवल अचिन्त्य है।

इस प्रकार विचारपूर्वक दृश्यप्रपंचका पूर्णतया अभाव करके अभाव करनेवाली वृत्तिको भी ब्रह्ममें लीन कर देना चाहिये।

(२)

सम्पूर्ण जगत् मायामय है। एक सच्चिदानन्द-घन परमात्मा ब्रह्म ही सत्य तत्त्व हैं, उनके सिवा जो कुछ प्रतीत होता है,सब अनात्म है, अवस्तु है। उनके सिवा कोई वस्तु है ही नहीं। काल और देश भी उनके अतिरिक्त और कुछ नहीं है। एकमात्र वही हैं और उनका वह ज्ञान भी उन्हींको है। वे नित्य ज्ञानस्वरूप, सनातन, निर्विकार, असीम, अपार, अनन्त,

अकल और अनवद्य परमानन्दमय हैं। वे सदसद्विलक्षण अचिन्त्यानन्दस्वरूप हैं।

इस प्रकार सम्पूर्ण अनात्मवस्तुओंका अभाव करके उनके आनन्दमय स्वरूपमें वृत्तिको जमा दे। बार-बार आनन्दकी आवृत्ति करता हुआ साधक ऐसा दृढ़ निश्चय करे कि वह असीम आनन्द है, घनानन्द है, अचलानन्द है, शान्तानन्द है, कूटस्थ आनन्द है, ध्रुवानन्द है, नित्यानन्द है, बोधस्वरूपानन्द है, ज्ञानस्वरूपानन्द है, परमानन्द है, महान् आनन्द है, अनन्त आनन्द है, अव्ययानन्द है, अनामयानन्द है, अकलानन्द है, अमलानन्द है, अजानन्द है, चिन्मयानन्द है, केवलानन्द है, एकमात्र आनन्द-ही-आनन्द—परिपूर्णानन्द है। आनन्दके सिवा और कुछ भी नहीं है।

इस प्रकार आनन्दमय ब्रह्मका चिन्तन

करता हुआ साधक अपने मन-बुद्धिको नित्य विज्ञानानन्दघन परमात्मामें विलीन कर दे।

(३)

जैसे कमरेमें रखे हुए घड़ेका आकाश (घड़ेके अंदरकी पोल) कमरेके आकाशसे भिन्न नहीं है और कमरेका आकाश उस महान् सुविस्तृत आकाशसे भिन्न नहीं है। कमरे और घड़ेकी उपाधिसे ही घटाकाश-मठाकाश-भेदसे छोटे-बड़े बहुत-से आकाश प्रतीत होते हैं, वस्तुतः सभीको अपने ही अंदर अवकाश देनेवाला एक ही महान् आकाश सर्वत्र परिपूर्ण है। घड़ेका क्षुद्र-सा दिखलायी देनेवाल आकाश यदि अपनी घटाकार उपाधिरूप अल्प सीमाको त्यागकर एक महान् आकाशमें स्थित होकर—जो उसका वास्तविक स्वरूप है—उसकी महान् दृष्टिसे देखे तो उसको पता लगेगा

कि सब कुछ उसीमें कल्पित है, सबके अंदर-बाहर केवल वही भरा है। अंदर-बाहर ही नहीं, घड़ेका निर्माण जिस उपादान कारणसे हुआ है, वह उपादान कारण भी मूलमें वस्तुतः वही है। उसके सिवा और कुछ है ही नहीं। वैसे ही एक ही चेतन आत्मा सर्वत्र परिपूर्ण है। उपाधिभेदसे ही यह विभिन्नता प्रतीत होती है। साधकको चाहिये कि इस प्रकार विचार करके वह व्यष्टिशरीरमेंसे आत्मरूप 'मैं' को निकालकर चिन्मय समष्टिरूप परमात्मामें स्थित हो जाय और फिर उसके समबुद्धिरूप नेत्रोंसे समस्त विश्वको अपने शरीरसहित उसीमें कल्पित देखे और यह भी देखे कि इसमें जो कुछ भी क्रिया हो रही है, सब परमात्माके ही अंदर परमात्माके ही संकल्पसे हो रही है। सबका निमित्त और

उपादान कारण केवल परमात्मा ही है। वही सर्वरूप है और मैं उससे अभिन्न हूँ।

असलमें जड, परिणामी, शून्य, विकारी, सीमित और अनित्य आकाशके साथ चेतन, सदा एकरस, सच्चिदानन्दघन, निर्विकार, असीम और नित्य परमात्माकी तुलना ही नहीं हो सकती। यह दृष्टान्त तो केवल आंशिकरूपसे समझनेके लिये ही है। उपर्युक्त ध्यान व्यवहारकालमें भी किया जा सकता है।

भगवान् श्रीरामका ध्यान

(१)

मिथिलापुरीमें महाराज जनकके दरबारमें भगवान् श्रीरामजी अपने छोटे भाई श्रीलक्ष्मणजीके साथ पधारते हैं। भगवान् श्रीराम नवनीलनीरद दूर्वाके अग्रभागके समान हरित आभायुक्त सुन्दर श्यामवर्ण और श्रीलक्ष्मणजी स्वर्णाभ गौरवर्ण हैं। दोनों इतने सुन्दर हैं कि जगत्की सारी शोभा और सारा सौन्दर्य इनके सौन्दर्य-समुद्रके सामने एक जलकण भी नहीं है। किशोर-अवस्था है। धनुष-बाण और तरकस धारण किये हुए हैं। कमरमें सुन्दर दिव्य पीताम्बर है। गलेमें मोतियोंकी, मणियोंकी और सुन्दर सुगन्धित तुलसीमिश्रित पुष्पोंकी मालाएँ हैं। विशाल और बलकी भण्डार सुन्दर भुजाएँ हैं, जो रत्नजटित कड़े और

बाजूबंदसे सुशोभित हैं। ऊँचे और पुष्ट कंधे हैं। अति सुन्दर चिबुक है, नुकीली नासिका है, कानोंमें झूमते हुए मकराकृति सुवर्णकुण्डल हैं, सुन्दर अरुणिमायुक्त कपोल हैं। लाल-लाल अधर हैं। उनके सुन्दर मुख शरत्पूर्णिमाके चन्द्रमाको भी नीचा दिखानेवाले हैं। कमलके समान बहुत ही प्यारे उनके विशाल नेत्र हैं। उनकी सुन्दर चितवन कामदेवके भी मनको हरनेवाली है। उनकी मधुर मुसकान चन्द्रमाकी किरणोंका तिरस्कार करती है। तिरछी भौंहें हैं। चौड़े और उन्नत ललाटपर ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक सुशोभित है। काले घुँघराले मनोहर बालोंको देखकर भौंरोंकी पंक्तियाँ भी लजा जाती हैं। मस्तकपर सुन्दर सुवर्णमुकुट सुशोभित है। कंधेपर यज्ञोपवीत शोभा पा रहे हैं। मत्त गजराजकी चालसे चल

रहे हैं। इतनी सुन्दरता है कि करोड़ों कामदेवोंकी उपमा भी उनके लिये तुच्छ है।

(२)

महामनोहर चित्रकूट पर्वतपर वटवृक्षके नीचे भगवान् श्रीराम, भगवती श्रीसीताजी और श्रीलक्ष्मणजी बड़ी सुन्दर रीतिसे विराजमान हैं। नीले और पीले कमलके समान कोमल और अत्यन्त तेजोमय उनके श्याम और गौर शरीर ऐसे लगते हैं, मानो चित्रकूटरूपी काम-सरोवरमें प्रेमरूप और शोभामय कमल खिले हों। ये नखसे शिखतक परम सुन्दर, सर्वथा अनुपम और नित्य दर्शनीय हैं। भगवान् राम और लक्ष्मणकी कमरमें मनोहर मुनिवस्त्र और सुन्दर तरकस बँधे हैं। श्रीसीताजी लाल वसनसे और नानाविध आभूषणोंसे सुशोभित हैं। दोनों भाइयोंके वक्ष:स्थल और कंधे विशाल हैं।

कंधोंपर यज्ञोपवीत और वल्कलवस्त्र धारण किये हुए हैं। गलेमें सुन्दर पुष्पोंकी मालाएँ हैं। अति सुन्दर भुजाएँ हैं। कर-कमलोंमें सुन्दर-सुन्दर धनुष-बाण सुशोभित हैं। परम शान्त, परम प्रसन्न, मनोहर मुखमण्डलकी शोभाने करोड़ों कामदेवोंको जीत लिया है। मनोहर मधुर मुसकान है। कानोंमें पुष्पकुण्डल शोभित हो रहे हैं। सुन्दर अरुण कपोल हैं। विशाल कमल-जैसे कमनीय और मधुर आनन्दकी ज्योतिधारा बहानेवाले अरुण नेत्र हैं। उन्नत ललाटपर ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक हैं और सिरपर जटाओंके मुकुट बड़े मनोहर लगते हैं। प्रभुकी यह वैराग्यपूर्ण मूर्ति अत्यन्त सुन्दर है।

भगवान् श्रीकृष्णका ध्यान

(१)

नन्दबाबाके आँगनमें नन्हें-से गोपाल थिरक-थिरककर नाच रहे हैं। नवीन मेघके समान श्याम आभासे युक्त नयन-मनहारी सुन्दर वर्ण है। श्याम शरीरपर माताके द्वारा पहनाया हुआ बहुत पतला रेशमी चमकदार पीला कुरता ऐसा जान पड़ता है, मानो श्याम घनघटामें इन्द्रधनुष सुशोभित हो। सुन्दर नन्हें-नन्हें लाल आभायुक्त मनोहर चरणकमल हैं। चरणनखोंकी ज्योति चरणकमलोंपर पड़कर अत्यन्त सुशोभित हो रही है। चरणोंमें नूपुरोंकी और कमरमें करधनीकी ध्वनि हो रही है, जो सुननेवालोंके हृदयमें आनन्द भर रही है। सुन्दर त्रिवलीयुक्त उदर है। गम्भीर नाभि है, हृदयपर गजमुक्ताओंकी, रत्नोंकी और सुन्दर सुगन्धित पुष्पोंकी तथा

तुलसीजीकी मालाएँ सुशोभित हैं। गलेमें गुंजाहार है, कौस्तुभमणि है और चौड़े वक्षःस्थलपर श्रीवत्सका चिह्न है। अत्यन्त रमणीय और ज्ञानिजन-मनमोहन मनोहर मुखकमल है। बड़ी मीठी मुसकान है। कानोंमें कुण्डल झलमला रहे हैं। गुलाबी रंगके गोल कपोल कुण्डलोंके प्रकाशसे चमक रहे हैं। लाल-लाल होठ बड़े ही कोमल और मनोहर हैं। बाँके और विशाल कमल-सरीखे नेत्र हैं। उनमेंसे आनन्द, प्रेम और रसकी विद्युत्-धारा निकल-निकलकर सबको अपनी ओर खींच रही है। नेत्रोंकी मनोहरताने सबके हृदयोंको आनन्द और प्रेमसे भर दिया है। उन्नत ललाट है। मस्तकपर मोरकी पाँखोंका मुकुट पहने हैं। विचित्र आभूषणोंसे और नवीन-नवीन कोमल पल्लवोंसे सारे शरीरको सजा रखा है। अंग-अंगसे

करोड़ों कामदेवोंपर विजय प्राप्त करनेवाली सुन्दरता प्रवाहित हो रही है। उछलते, कूदते, हँसते, जोरसे मधुर आवाज लगाते हुए बीच-बीचमें मैया यशोदाकी ओर ताक रहे हैं। माता अतृप्त और निर्निमेष नेत्रोंसे भुवनमोहन लालकी मनोहर माधुरी छबिको निरख-निरखकर मुग्ध हो रही हैं।

(२)

कुरुक्षेत्रमें दोनों सेनाओंके बीच अर्जुनका दिव्य रथ खड़ा है। सब ओर शान्ति-सी छायी हुई है। रथके अगले भागपर वीरवेषमें कवच-कुण्डलधारी भगवान् श्रीकृष्ण विराजित हैं। श्याम वर्ण है। शरीरपर पीताम्बर सुशोभित है। जगत्की सारी सुन्दरता उनकी सुन्दरतापर न्योछावर हो रही है। परम सुन्दर मुखकमल प्रफुल्लित है; शान्त है और अपने तेजसे सबको

प्रकाशित कर रहा है। कानोंमें मकराकृति कुण्डल हैं। रक्त कमलके समान विशाल नेत्रोंसे ज्ञानकी दिव्य ज्योति प्रस्फुटित हो रही है। उन्नत ललाटपर ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक सुशोभित है। काले घुँघराले मनोहर केश हैं। सिरपर रत्नमण्डित स्वर्णमुकुट शोभा पा रहा है। एक हाथमें घोड़ोंकी लगाम है। चाबुक पास रखी है और दूसरा हाथ ज्ञानमुद्रासे सुशोभित है। अर्जुन रथके पिछले भागमें बैठे हुए अत्यन्त करुणभावसे शरणापन्न हुए भगवान्‌की ओर देख रहे हैं तथा श्रीभगवान् बड़ी ही शान्ति और धीरताके साथ आश्वासन देते हुए एवं अपनी मधुर मुसकानसे अर्जुनके विषादको नष्ट करते हुए उन्हें गीताका महान् उपदेश दे रहे हैं।

भगवान् श्रीशिवका ध्यान

सुन्दर कैलास पर्वतपर भगवान् श्रीशंकर विराजमान हैं। रक्ताभ सुन्दर गौरवर्ण है। रत्नसिंहासनपर मृगछाला बिछी है, उसीपर आप आसीन हैं। चार भुजाएँ हैं, दाहिने ऊपरका हाथ ज्ञानमुद्राका है, नीचेके हाथमें फरसा है, बायाँ ऊपरका हाथ मृगमुद्रासे सुशोभित है, नीचेका हाथ जानुपर रखे हुए हैं। गलेमें रुद्राक्षोंकी माला है, साँप लिपटे हुए हैं, कानोंमें कुण्डल सुशोभित हैं। ललाटपर त्रिपुण्ड्र शोभा पा रहा है, सुन्दर तीन नेत्र हैं, नेत्रोंकी दृष्टि नासिकापर लगी है; मस्तकपर अर्धचन्द्र है, सिरपर जटाजूट सुशोभित है। अत्यन्त प्रसन्न मुख है। देवता और ऋषि भगवान्‌की स्तुति कर रहे हैं। बड़ा ही सुन्दर विज्ञानानन्दमय स्वरूप है।

भगवान् श्रीविष्णुका ध्यान और मानस-पूजा

सशंखचक्रं सकिरीटकुण्डलं
सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणम्।
सहारवक्षःस्थलकौस्तुभश्रियं
नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम्॥

'भगवान् शंख और चक्र (तथा गदा-पद्म) धारण किये हुए हैं, उनके मस्तकपर सुन्दर किरीट-मुकुट और कानोंमें कुण्डल हैं, वे पीताम्बर पहने हुए हैं, नेत्र कमलदलके सदृश कोमल, विशाल और खिले हुए हैं, वक्षःस्थलपर कौस्तुभमणि, रत्नोंका चन्द्रहार और श्रीवत्सका चिह्न सुशोभित है; ऐसे चतुर्भुज भगवान् विष्णुको मैं मस्तकसे नमस्कार करता हूँ।'

महान् तपस्वी परम भक्त श्रीध्रुवजी महाराज '**ॐ नमो भगवते वासुदेवाय**' इस द्वादशाक्षर-मन्त्रका जप करते थे और भगवान् श्रीविष्णुके चतुर्भुजस्वरूपका ध्यान किया करते थे।

ध्यानके समय प्रथम 'नारायण' नामकी ध्वनि करके भगवान्का आवाहन करना चाहिये। 'नारायण' भगवान् विष्णुका नाम है। नारायण शब्दमें चार अक्षर हैं—ना रा य ण और भगवान् विष्णुके चार भुजाएँ हैं, चार ही आयुध हैं—शंख, चक्र, गदा, पद्म। ऐसे भगवान् विष्णुका ध्यान करना चाहिये। भगवान्का स्वरूप बहुत ही अद्‌भुत और सुन्दर है। भगवान्का ध्यान पहले बाहर आकाशमें करे, मानो भगवान् आकाशमें प्रकट हो गये हैं और आकाशमें स्थित होकर हमलोगोंके ऊपर अपने दिव्य गुणोंकी ऐसी वर्षा कर रहे हैं कि हम

अनुपम आनन्दका अनुभव करते हुए आनन्दमुग्ध हो रहे हैं। जैसे पूर्णिमाका चन्द्रमा आकाशमें स्थित होकर अमृतकी वर्षा करता है, वैसे ही आकाशमें स्थित होकर भगवान् अपने गुणोंकी वर्षा कर रहे हैं। क्षमा, शान्ति, समता, ज्ञान, वैराग्य, दया, प्रेम और आनन्दकी मानो अजस्त्र वर्षा हो रही है और हमलोग उसमें सर्वथा मग्न हो रहे हैं। तदनन्तर ऐसा देखे कि भगवान् आकाशमें हमसे कुछ ही दूरपर स्थित हैं। उनका आकार करीब ५.५ फुट लम्बा और करीब १.२५-१.५ सामनेसे चौड़ा है। भगवान्‌के श्रीअंगका वर्ण आकाशके सदृश नील है; परंतु उस नीलिमाके साथ ही भगवान्‌में अत्यन्त उज्ज्वल दिव्य प्रकाश है। अतएव नीलिमाके साथ उस प्रकाशकी उज्ज्वलताका सम्मिश्रण होनेसे एक विलक्षण

वर्णकी ज्योति बन गयी है। इस प्रकारका भगवान्‌का चमकता हुआ नीलोज्ज्वल सुन्दर वर्ण है। भगवान्‌का शरीर दिव्य भगवत्स्वरूप ही है। हमलोगोंके शरीरकी धातु पार्थिव है, भगवान्‌का श्रीविग्रह तैजस धातुका और चिन्मय (चेतन) है। सूर्य लाल रंगका है, किंतु प्रकाश विशेष होनेसे और समीप आनेसे वह श्वेतोज्ज्वल रंगका दीखता है, इसी प्रकार भगवान्‌का स्वरूप नीलवर्णका होनेपर भी महान् प्रकाश होनेसे और समीप आनेसे वह ज्योतिर्मय श्वेतवर्ण-सा दीखता है। सूर्यके तेजमें बड़ी भारी गरमी रहती है। परंतु भगवान्‌के तेजोमय स्वरूपमें दिव्य और सुहावनी शीतलता है। वह अपार शान्तिमय है। भगवान्‌के चरणयुगल बहुत ही सुन्दर और सुकोमल हैं। भगवान्‌के चरणतलोंमें गुलाबी रंगकी झलक है एवं

सुन्दर-सुन्दर रेखाएँ हैं—ध्वजा, पताका, वज्र, अंकुश, यव, चक्र, शंख तथा ऊर्ध्वरेखा आदि-आदि। भगवान् आकाशमें नीचे उतर आये हैं। उनके श्रीचरण जमीनको छू नहीं रहे हैं। देवता भी आकाशमें स्थित होते हैं, जमीनको नहीं छूते, फिर ये तो देवोंके भी परम देव हैं। भगवान्‌के सुन्दर सुमृदुल चरणकमल बहुत ही चिकने हैं। उनकी अँगुलियाँ विशेष शोभायुक्त हैं। उनके चरणनखोंकी दिव्य ज्योति चमक रही है। भगवान् पीताम्बर पहने हुए हैं और जैसे उनके चरण चमकीले, सुन्दर और सुकोमल हैं, ऐसे ही उनकी पिंडलियाँ और दोनों घुटने तथा ऊरु (जंघे) भी हैं। भगवान्‌का कटिदेश बहुत पतला है, उसमें रत्नोज्ज्वल करधनी शोभित है, नाभि गम्भीर है, उदरपर त्रिवली—तीन रेखाएँ हैं। विशाल वक्ष:स्थल

है, गलेमें अनेकों प्रकारकी सुन्दर मालाएँ पहने हैं। सुन्दर दिव्य वनपुष्पोंकी एक माला घुटनोंतक लटक रही है, दूसरी नाभितक है। मोतियोंकी माला, स्वर्णकी माला, चन्द्रहार, कौस्तुभमणि और रत्नजटित कंठा पहने हैं। विशाल चार भुजाएँ हैं, चारों भुजाएँ घुटनोंतक लम्बी हैं और बहुत ही सुन्दर हैं, ऊपरमें मोटी और नीचेसे पतली हैं, पुष्ट हैं तथा चिकनी और चमकीली हैं। इनमें दो भुजाएँ नीचेकी ओर लम्बी पसरी हुई हैं। नीचेकी भुजाओंमें गदा और पद्म हैं तथा ऊपरकी दोनों भुजाओंमें शंख और चक्र हैं। हस्तांगुलियोंमें रत्नजटित अँगूठियाँ हैं। चारों हाथोंमें कड़े पहने हुए हैं और ऊपर बाजूबंद सुशोभित हैं। कंधे पुष्ट हैं। भगवान् यज्ञोपवीत धारण किये और गुलनार दुपट्टा ओढ़े हुए हैं। ग्रीवा अत्यन्त

सुन्दर शंखके सदृश है, ठोडी बहुत ही मनोहर है, अधर और ओष्ठ लाल मणिके सदृश चमक रहे हैं। दाँतोंकी पंक्ति मानो परमोज्ज्वल मोतियोंकी पंक्ति है। जब भगवान् हँसते हैं, तब ऐसा प्रतीत होता है, मानो सुन्दर सुषमायुक्त गुलाब या कमलका फूल खिला हुआ है। भगवान्‌की वाणी बड़ी ही कोमल, मधुर, सुन्दर और अर्थयुक्त है; कानोंको अमृतके समान प्रिय लगती है। भगवान्‌की नासिका अति सुन्दर है। कपोल (गाल) चमक रहे हैं—उनपर गुलाबी रंगकी झलक है। कानोंमें रत्नजटित मकराकृति स्वर्णकुण्डल हैं, जिनकी झलक गालोंपर पड़ रही है और वे गाल चम-चम चमक रहे हैं। भगवान्‌के दोनों नेत्र खिले हुए हैं, जैसे प्रफुल्लित मनोहर कमलकुसुम हों। आकाशमें स्थित होकर भगवान् एकटक

नेत्रोंसे हमारी ओर देख रहे हैं और नेत्रोंके द्वारा प्रेमामृतकी वर्षा कर रहे हैं। भगवान् समभावसे सबको देखते हैं। बड़े दयालु हैं, हमें दयाकी दृष्टिसे देख रहे हैं और मानो दया, प्रेम, ज्ञान, समता, शान्ति और आनन्दकी वर्षा कर रहे हैं। ऐसा लगता है कि दया, प्रेम, ज्ञान, समता, शान्ति और आनन्दकी बाढ़ आ गयी है। भगवान्के दर्शन, भाषण, स्पर्श—सभी आनन्दमय हैं। भगवान्में जो अद्भुत मधुर गन्ध है, वह नासिकाको अमृतके समान प्रिय लगती है। भगवान्का स्पर्श करते हैं तो शरीरमें रोमांच हो जाते हैं और हृदयमें बड़ी भारी प्रसन्नता होती है। भगवान्की भृकुटि सुन्दर, विशाल और मनोहर है। ललाट चमक रहा है। उसपर श्रीधारी तिलक सुशोभित है। ललाटपर काले घुँघराले केश चमक रहे हैं।

केशोंपर रत्नजटित स्वर्णमुकुट सुशोभित है। भगवान्‌के मुखारविन्दके चारों ओर प्रकाशकी किरणें फैली हुई हैं। भगवान्‌की सुन्दरता अलौकिक है, मनको बरबस आकर्षित करती है। भगवान् नेत्रोंसे हमें ऐसे देख रहे हैं मानो पी ही जायँगे। भगवान्‌में पृथ्वीसे बढ़कर क्षमा है, चन्द्रमासे बढ़कर शान्ति है और कामदेवसे बढ़कर सुन्दरता है। कोटि-कोटि कामदेव भी उनकी सुन्दरताके सामने लजा जाते हैं। उनके स्वरूपको देखकर पशु-पक्षी भी मोहित हो जाते हैं, मनुष्यकी तो बात ही क्या है? उनके स्वरूपकी सुन्दरता अद्‌भुत है। जब भगवान् प्रकट होकर दर्शन देते हैं, तब इतना आनन्द आता है कि मनुष्यकी पलकें भी नहीं पड़ सकतीं। हृदय प्रफुल्लित हो जाता है, शरीरमें रोमांच और धड़कन होने लगती है। नेत्रोंमें

प्रेमानन्दके अश्रुओंकी धारा बहने लगती है, वाणी गद्गद हो जाती है, कण्ठ रुक जाता है, हृदयमें आनन्द समाता नहीं। नेत्र एकटक वैसे ही देखते रहते हैं, जैसे चकोर पक्षी पूर्ण चन्द्रमाको देखता है। प्रभुसे हम प्रार्थना करते हैं कि जिस प्रकारसे हम आपका ध्यानावस्थामें दिव्य दर्शन कर रहे हैं, इसी प्रकारका दर्शन हमें हर समय होता रहे। आपके नामका जप, स्वरूपका ध्यान नित्य-निरन्तर बना रहे। आपमें हमारी परम श्रद्धा हो, परम प्रेम हो। यही आपसे प्रार्थना है। आप ही ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सूर्य, चन्द्रमा, आकाश, वायु, तेज, जल, पृथ्वी—सब कुछ हैं। आप ही इस विश्वके रचनेवाले हैं और आप ही रचनाकी सामग्री भी हैं। इस संसारके उपादान-कारण और निमित्त-कारण आप ही हैं। इसीलिये

कहा जाता है कि जो कुछ है सब आपका ही स्वरूप है। आपसे यही प्रार्थना है कि जैसे आप बाहरसे आकाशमें दीखते हैं, ऐसे ही हमारे हृदयमें दीखते रहें।

अब हृदयमें ध्यान करें—हृदयमें प्रफुल्लित कमल है। उस कमलपर शेषजीकी शय्या है और शेषजीपर श्रीभगवान् पौढ़े हुए हैं एवं मन्द-मन्द मुसकरा रहे हैं, वहीं सूक्ष्म शरीर धारणकर मैं भगवान्‌के स्वरूपको देख रहा हूँ। भगवान्‌के बहुत-से भक्त भगवान्‌के चारों ओर परिक्रमा कर रहे हैं और दिव्य स्तोत्रोंसे उनके गुणोंका स्तवन और नामोंका कीर्तन कर रहे हैं। मैं भी उनमें शामिल हूँ। देवताओंमें भगवान् शिव और ब्रह्माजी, ऋषि-मुनियोंमें नारद और सनकादि, यक्षोंमें कुबेर, राक्षसोंमें विभीषण, असुरोंमें प्रह्लाद और बलि, पशुओंमें हनुमान्‌जी

और जाम्बवान्, पक्षियोंमें काकभुशुण्डिजी, गरुड़जी, जटायु और सम्पाति, मनुष्योंमें अम्बरीष, भीष्म, ध्रुव तथा और भी बहुत-से भक्त सम्मिलित होकर स्तुति कर रहे हैं। दिव्य स्तोत्रोंके द्वारा गुण गा रहे हैं, परिक्रमा कर रहे हैं और प्रेममें निमग्न हो रहे हैं। फिर बाहर देखता हूँ तो भगवान्का उसी प्रकारका स्वरूप बाहर दीख रहा है। यही अन्तर है कि भीतर जो भगवान्का स्वरूप है, उसमें भगवती लक्ष्मी उनके चरण दबा रही हैं और उनकी नाभिसे कमल निकला है। जिसपर ब्रह्माजी विराजमान हैं। बाहर देखता हूँ तो भगवान् अकेले ही दीख रहे हैं और आकाशमें स्थित हैं। जहाँ हमारे मन और नेत्र जाते हैं, वहीं भगवान् दीख रहे हैं। प्रभुको देखकर हम इतने मुग्ध हो रहे हैं कि हमें दूसरी कोई बात

अच्छी ही नहीं लगती। प्रभुकी स्तुति भी तो क्या करें! जो कुछ भी करते हैं वह वास्तवमें स्तुतिकी जगह निन्दा ही होती है। हम उनकी कितनी ही स्तुति करें, बेचारी वाणीमें शक्ति ही नहीं जो उनके अल्प गुणोंका भी वर्णन कर सके। उनके अपरिमित गुण-प्रभावका वर्णन और स्तवन कौन कर सकता है?

भगवान्‌को पधारे बहुत समय हो गया, अब भगवान्‌की पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार ध्यान करे कि अब मैं भगवान्‌की मानसिक पूजा कर रहा हूँ। मैं देख रहा हूँ कि एक चौकी मेरे दाहिनी ओर तथा दूसरी मेरे बायीं ओर रखी है। चौकीका परिमाण लगभग तीन फुट चौड़ा और छः फुट लम्बा है। दाहिनी ओरकी चौकीपर पूजाकी सारी पवित्र सामग्री सजायी रखी है। भगवान् मेरे सामने विराजमान हैं। भगवान् स्नान

करके पधारे हैं। वस्त्र धारण कर रखे हैं और यज्ञोपवीत सुशोभित है। अब मैं पाद्य—चरण धोनेका जल लेकर भगवान्‌के श्रीचरणोंको धो रहा हूँ, बायें हाथसे जल डाल रहा हूँ और दाहिने हाथसे चरण धो रहा हूँ तथा मुखसे यह मन्त्र बोल रहा हूँ—

'ॐ पादयोः पाद्यं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

फिर उस बर्तनको बायीं ओर चौकीपर रखकर, हाथ धोकर दूसरा चन्दनादि सुगन्धयुक्त गंगाजलसे भरा प्याला लेता हूँ और भगवान्‌को अर्घ्य देता हूँ। भगवान् दोनों हाथोंकी अंजलि पसारकर अर्घ्य ग्रहण करते हैं। इस समय उन्होंने अपने चार हाथोंके आयुध दो हाथोंमें ले लिये हैं। अर्घ्य अर्पण करते समय मैं मन्त्र बोलता हूँ—

‘ॐ हस्तयोरर्घ्यं समर्पयामि नारायणाय नमः।’

इस प्रकार भगवान् अर्घ्य ग्रहण करके उस जलको छोड़ देते हैं। फिर मैं उस प्यालेको बायीं ओरकी चौकीपर रख देता हूँ तथा हाथ धोकर, आचमनका जल लेकर भगवान्‌को आचमन करवाता हूँ और मन्त्र बोलता हूँ—

‘ॐ आचमनीयं समर्पयामि नारायणाय नमः।’

आचमनके अनन्तर भगवान्‌के हाथ धुलाता हूँ और प्यालेको बायीं तरफ चौकीपर रखकर हाथ धोता हूँ। फिर एक कटोरी दाहिनी ओरकी चौकीसे उठाता हूँ, जिसमें केसर, चन्दनके साथ कुंकुम आदि सुगन्धित द्रव्य घिसा हुआ रखा है। उस कटोरीको मैं बायें हाथमें लेकर दाहिने हाथसे भगवान्‌के मस्तकपर तिलक करता हूँ और मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ गन्धं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

उसके बाद उस कटोरीको बायीं ओरकी चौकीपर रख देता हूँ तथा दूसरी कटोरी लेता हूँ, जिसमें छोटे-छोटे आकारके सुन्दर मोती हैं, उन्हें मुक्ताफल कहते हैं। मैं बायें हाथमें मोतीकी कटोरी लेकर दाहिने हाथसे भगवान्‌के मस्तकपर मोती लगाता हूँ और यह मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ मुक्ताफलं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

इसके पश्चात् सुन्दर सुगन्धित पुष्पोंसे दोनों अंजलि भरकर भगवान्‌पर चढ़ाता हूँ, पुष्पोंके साथ तुलसीदल भी है और यह मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ पत्रं पुष्पं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

यह मन्त्र बोलकर भगवान्‌पर पत्र-पुष्प चढ़ा देता हूँ। इसके अनन्तर एक अत्यन्त

सुन्दर सुगन्धपूर्ण बड़ी पुष्पमाला दोनों हाथोंमें लेकर मुकुटपरसे गलेमें पहनाता हूँ और यह मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ मालां समर्पयामि नारायणाय नमः।'

फिर देखता हूँ कि एक धूपदानी है, जिसमें निर्धूम अग्नि प्रज्वलित हो रही है, मैं एक कटोरीमें जो चन्दन, कस्तूरी, केसर आदि नाना प्रकारके सुगन्धित द्रव्योंसे मिश्रित धूप रखी है; उसे अग्निमें डालकर भगवान्‌को धूप देता हूँ और यह मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ धूपमाघ्रापयामि नारायणाय नमः।'

तदनन्तर दाहिनी ओर जो गोघृतका दीपक प्रज्वलित हो रहा है, उसे हाथमें लेकर भगवान्‌को दिखाता हूँ और मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ दीपं दर्शयामि नारायणाय नमः।'

तत्पश्चात् दीपकको बायीं ओरकी चौकीपर

रखकर हाथ धोता हूँ। एक सुन्दर बड़ी थालीमें ५६ प्रकारके भोग और ३६ प्रकारके व्यंजन परोसकर उसे भगवान्‌के सामने रत्नजटित चौकीपर रख देता हूँ। बड़ी सुन्दर स्वर्ण-रत्नजटित मलयागिरि चन्दनसे बनी दो चौकियाँ, जिनकी लंबाई-चौड़ाई दो-ढ़ाई फुट है, देवताओंने पहलेसे ही लाकर रखी थीं, उनमें एक चौकीपर सुन्दर और पवित्र आसन बिछा था, जिसपर भगवान् विराजमान हैं और दूसरीपर यह भोगकी सामग्री रखी गयी। भोग लगाते समय मैं मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ नैवेद्यं निवेदयामि नारायणाय नमः।'

भगवान् बड़े प्रेमसे भोजन करते हैं। थोड़ा-सा भोजन कर चुकनेपर जब वे भोजन करना बंद कर देते हैं, तब उस प्रसादवाली थालीको उठाकर बायीं ओरकी चौकीपर रख

देता हूँ और हाथ जोड़कर पवित्र जलसे भगवान्‌के हाथ धुला देता हूँ। तत्पश्चात् भगवान्‌को शुद्ध जलसे आचमन करवाता हूँ और यह मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ आचमनीयं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

फिर उस चौकीको धोकर उसपर सुन्दर सुमधुर फल रख देता हूँ, जो तैयार किये हुए हैं और एक सुन्दर पवित्र थालीमें रखे हुए हैं। भगवान् उन फलोंका भोग लगाते हैं और मैं मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ ऋतुफलं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

थोड़े-से फलोंका भोग लगानेपर जब भगवान् खाना बंद कर देते हैं, तब मैं बचे हुए फलोंकी थालीको उठाकर बायीं ओरकी चौकीपर रख देता हूँ, जो भगवान्‌का प्रसाद है। फिर अपने हाथ धोकर भगवान्‌के हाथ धुलाता हूँ।

तदनन्तर पवित्र जलसे उन्हें पुनः आचमन करवाता हूँ और मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ पुनराचमनीयं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

आचमन कराकर उस पात्रको बायीं ओरकी चौकीपर रख देता हूँ और उस चौकीको धोकर अलग रख देता हूँ। तदनन्तर हाथ धोकर एक थाली उठाता हूँ, जिसमें बढ़िया सोनेके वर्क लगे पान रखे हैं, जिनमें सुपारी, इलायची, लौंग तथा अन्य पवित्र सुगन्धित द्रव्य दिये हुए हैं। उस थालीको भगवान्‌के सामने करता हूँ। भगवान् पान लेकर चबाते हैं और मैं यह मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ पूगीफलं च ताम्बूलमेलालवंगसहितं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

इसके बाद उस पानकी थालीको बायीं ओरकी चौकीपर रख देता हूँ। फिर पवित्र

जलसे अपने हाथ धोकर और भगवान्‌के हाथोंको धुलाकर मुख-शुद्धिके लिये उन्हें पुनः आचमन करवाता हूँ और यह मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ पुनर्मुखशुद्‌ध्यर्थमाचमनीयं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

आचमन कराकर फिर भगवान्‌के हाथ धुला देता हूँ और उस जलपात्रको बायीं ओरकी चौकीपर रख देता हूँ। इस प्रकारसे पूजा करके भगवान्‌को दक्षिणा देता हूँ। कुबेरने पहलेसे ही अपने भंडारसे अमूल्य रत्न लाकर रखे हैं, वे अर्पण करता हूँ। भगवान्‌की वस्तु भगवान्‌को वैसे ही देता हूँ, जैसे सेवक अपने स्वामीको देता है और यह मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ दक्षिणाद्रव्यं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

भगवान्‌को दक्षिणा अर्पण करके मैं अपने-आपको भी उनके श्रीचरणोंमें अर्पण कर देता हूँ। अब भगवान्‌की आरती उतारता हूँ। एक थाली लेता हूँ, उसके बीचमें कटोरी है, उसमें कपूर प्रकाशित हो रहा है, उसके चारों ओर मांगलिक द्रव्य, तुलसीदल, पुष्प, नारियल, दही, दूर्वा आदि सब सजाये हुए हैं। मैं दोनों हाथोंपर थाली रखकर भगवान्‌की आरती उतार रहा हूँ। आरती उतारकर आरतीकी थालीको बायीं ओरकी चौकीपर रख देता हूँ। फिर हाथ धोकर भगवान्‌को पुष्पांजलि अर्पण करता हूँ। पुष्पांजलि देकर मैं खड़ा हो जाता हूँ और भगवान् भी खड़े हो जाते हैं। फिर मैं भगवान्‌के चारों ओर चार परिक्रमा करता हूँ और साष्टांग प्रणाम करता हूँ। प्रणाम करके भगवान्‌की स्तुति गाता हूँ—

त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यैः
स्तवैर्वेदैः सांगपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः।
ध्यानावस्थिततद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणा देवाय तस्मै नमः॥

परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान्।
पुरुषं शाश्वतं दिव्यमादिदेवमजं विभुम्॥

इस प्रकार भगवान्‌की स्तुति करनेके बाद सबको आरती देकर भगवान्‌का प्रसाद उपस्थित भाइयोंको बाँटा जाता है। पहले तो सबके हाथ धुलाकर इकट्ठा किया हुआ चरणामृत बाँटा जाता है। फिर एक-दूसरे भाई सबके हाथ धुलाते हैं। तदनन्तर तीसरे भाई भगवान्‌का प्रसाद दे रहे हैं और चौथे भाई पुनः सबके हाथ धुलाकर आचमन कराते हैं। इस प्रकार सब लोग आचमन करके

प्रसाद पाते हैं और फिर हाथ धोकर खड़े हो भगवान्‌के दिव्य स्तोत्रोंका पाठ कर रहे हैं, दिव्य स्तुति गा रहे हैं और भगवान्‌की परिक्रमा कर रहे हैं। परिक्रमा करते हुए भगवान्‌के दिव्य गुणोंका कीर्तन कर रहे हैं। भगवान् मुग्ध हो रहे हैं और हमलोग भी मुग्ध हो रहे हैं। इस प्रकारसे सब मिलकर भगवान्‌के नामका कीर्तन कर रहे हैं—

'श्रीमन्नारायण नारायण नारायण
श्रीमन्नारायण नारायण नारायण।'

भगवान्‌के ये मानसिक दर्शन अमृतके समान मधुर और प्रिय हैं, उनका स्पर्श भी अमृतके समान अत्यन्त प्रिय है, उनकी सुकोमल मधुर वाणी कानोंके लिये अमृतके समान है, उनकी मधुर अंग-गन्ध भी अमृतके समान है और भगवान्‌के प्रसादकी तो बात ही क्या है? वह तो अपूर्व अमृतके तुल्य है। यों भगवान्‌के

दर्शन, भाषण, स्पर्श, वार्तालाप, चिन्तन, गन्ध—सभी अमृतके तुल्य हैं, सभी रसमय, आनन्दमय और प्रेममय हैं। भगवान्‌की श्रीमूर्ति बड़ी मधुर है, इसीलिये उसे माधुर्यमूर्ति कहते हैं। उनके दर्शन बड़े ही मधुर हैं।

इस प्रकार भगवान्‌का ध्यान करता हुआ साधक भगवान्‌के प्रेमानन्दमें विभोर होकर कहता है—ध्यानावस्थामें ही जब इतना बड़ा भारी आनन्द है, तब जिस समय आपके साक्षात् दर्शन होते हैं, उस समय तो न मालूम कितना महान् आनन्द और अपार शान्ति मिलती है। जिनको आपके साक्षात् दर्शन होते हैं, वे पुरुष सर्वथा धन्य हैं। जिनको आपके दर्शन होते हैं, श्रद्धा होनेपर उनके दर्शनसे ही पापोंका नाश हो जाता है, तब फिर आपके दर्शनोंकी तो बात ही क्या है? आप साक्षात्

परब्रह्म परमात्मा हैं। आप परम धाम हैं, परम पवित्र हैं। आप साक्षात् अविनाशी पुरुष हैं। आप इस संसारकी उत्पत्ति, स्थिति, पालन करनेवाले हैं। आपके समान कोई भी नहीं है, आपके समान आप ही हैं। मैं आपकी महिमाका गान कहाँतक करूँ? क्षमा, दया, प्रेम, शान्ति, सरलता, समता, संतोष, ज्ञान, वैराग्य आदि गुणोंके आप सागर हैं। आपके गुणोंके सागरकी एक बूँदके आभासका प्रभाव सारी दुनियामें व्याप्त है। सारे देवताओंमें, मनुष्योंमें सबके गुण, प्रभाव, शक्ति आदि जो कुछ भी देखनेमें आते हैं, वे सब मिलकर आप गुणसागरकी एक बूँदका आभासमात्र है। आपके रूप-लावण्यका कौन वर्णन कर सकता है? आपका स्वरूप चिन्मय है, आपके दर्शन अलौकिक हैं। आपके दर्शनसे मनुष्य इतना मुग्ध हो जाता

है कि उसे अपने-आपका होश नहीं रहता, केवलमात्र आपका ही ज्ञान रहता है। आपका अपरिमित प्रभाव है। आपने गीतामें कहा है—

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंऽशसम्भवम्॥

(१०।४१)

'जो-जो भी विभूतियुक्त अर्थात् ऐश्वर्ययुक्त, कान्तियुक्त और शक्तियुक्त वस्तु है, उस-उसको तू मेरे तेजके अंशकी ही अभिव्यक्ति (प्राकट्य)जान।'

आपने गीताके सातवें अध्यायमें यह भी बतलाया है कि 'बलवानोंका बल मैं हूँ, तेजस्वियोंका तेज मैं हूँ, बुद्धिमानोंकी बुद्धि मैं हूँ, ज्ञानवानोंका ज्ञान मैं हूँ। यानी संसारमें जो कुछ चीज प्रभावशाली, तेजवाली, बलवाली प्रतीत होती है, वह सब मेरे तेजके एक अंशका

प्राकट्य है।' गीताके दसवें अध्यायके अन्तमें आपने अपने प्रभावको बताते हुए कहा है—

अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन।
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत्॥

(१०।४२)

'अथवा अर्जुन! इस बहुत जाननेसे तेरा क्या प्रयोजन है। मैं इस सम्पूर्ण जगत्‌को अपनी योगशक्तिके एक अंशमात्रसे धारण करके स्थित हूँ।'

आप ही निर्गुण, निराकार, सच्चिदानन्दघन ब्रह्म हैं, आप ही स्वयं सगुण, साकाररूपमें प्रकट होते हैं। आप साक्षात् पूर्णब्रह्म परमात्मा हैं।

इसी प्रकार श्रीराम, श्रीकृष्ण, श्रीशिव आदि अपने-अपने इष्टदेवोंका ध्यान, मानस-पूजा, आरती, स्तुति-प्रार्थना और गुणगान करना चाहिये।

घर-घरमें भगवान्‌की पूजा

श्रीभगवान्‌ने साकाररूपसे साक्षात् प्रकट होकर कभी मुझे दर्शन दिये हैं, इस बातके कहनेमें असमर्थ होनेपर भी मैं बड़े जोरके साथ यह विश्वास दिला सकता हूँ कि यदि कोई भगवत्परायण होकर निष्काम प्रेमभावसे भगवान्‌की भक्ति करे तो उसे साक्षात् दर्शन देनेके लिये भगवान् निश्चय ही बाध्य हैं। भगवान्‌ने स्वयं कहा है—

भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप॥

(गीता ११।५४)

‘हे अर्जुन! अनन्य भक्ति करके तो इस प्रकार साकाररूपसे मैं प्रत्यक्ष देखनेके लिये और तत्त्वसे जाननेके लिये तथा प्रवेश करनेके लिये अर्थात् एकीभावसे प्राप्त होनेके लिये भी शक्य हूँ।’

इससे यह सिद्ध हुआ कि भगवान्‌का प्रत्यक्ष दर्शन अनन्य भक्तिसे हो सकता है। अनन्य भक्तिके लिये अभ्यासकी आवश्यकता है। यदि सब समय भगवान्‌के नामका जप और हृदयमें उनका स्मरण करते हुए संसारके समस्त व्यवहार उसीके लिये किये जायँ तो परमात्मामें अनन्य भक्ति हो जाती है। अनन्य भक्तियुक्त पुरुष स्वयं पवित्र होता है, इसमें तो कहना ही क्या है, परन्तु वह अपने भक्तिके भावोंसे जगत्‌को पवित्र कर सकता है। यदि घरमें एक भी पुरुषको अनन्य भक्तिसे परमात्माका साक्षात्कार हो जाय तो उसका समस्त कुल पवित्र समझा जाता है। कहा है—

कुलं पवित्रं जननी कृतार्था वसुन्धरा पुण्यवती च तेन।
अपारसंवित्सुखसागरेऽस्मिँल्लीनं परे ब्रह्मणि यस्य चेतः॥

(स्कन्दपु०, माहे० खं० कौ० खं० ५५। १४०)

'जिसका चित्त उस अपार विज्ञानानन्दघन

समुद्ररूप परब्रह्म परमात्मामें लीन हो गया है उससे कुल पवित्र, माता कृतार्थ और पृथ्वी पुण्यवती होती है।'

भगवान् नारद कहते हैं—

कण्ठावरोधरोमांचाश्रुभिः परस्परं लपमानाः पावयन्ति कुलानि पृथिवीं च।

तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि सुकर्मीकुर्वन्ति कर्माणि सच्छास्त्रीकुर्वन्ति शास्त्राणि।

(नारदभक्तिसूत्र ६८-६९)

'ऐसे भक्त कण्ठावरोध, रोमांचित और अश्रुयुक्त नेत्रवाले होकर परस्पर सम्भाषण करते हुए अपने कुलोंको और पृथ्वीको पवित्र करते हैं। वे तीर्थोंको सुतीर्थ और कर्मोंको सुकर्म तथा शास्त्रोंको सत्-शास्त्र बनाते हैं, उनके भक्तिके आवेशसे वायुमण्डल शुद्ध होता है, जिससे सम्बन्ध रखनेवाले सब कुछ पवित्र हो जाते हैं

और पृथ्वीपर ऐसे पुरुषोंके निवाससे पृथ्वी पवित्र हो जाती है। वे जिस तीर्थमें रहते हैं वही सुतीर्थ, वे जिन कर्मोंको करते हैं वे ही सत्कर्म और वे जिन शास्त्रोंका उपदेश करते हैं वे ही सत्-शास्त्र बन जाते हैं।'

मोदन्ते पितरो नृत्यन्ति देवताः सनाथा चेयं भूर्भवति।

(नारदभक्तिसूत्र ७१)

'ऐसे भक्तोंको प्रकट हुए देखकर उनके पितृगण अपने उद्धारकी आशासे आह्लादित होते हैं, देवतागण उनके दर्शन कर नाचने लगते हैं और पृथ्वी अपनेको सनाथा समझने लगती है।'

पद्मपुराणमें भी ऐसे ही वचन हैं—

आस्फोटयन्ति पितरो नृत्यन्ति च पितामहाः।
मद्वंशे वैष्णवो जातः स नस्त्राता भविष्यति॥

पितृ-पितामहगण अपने वंशमें भगवद्‌भक्त प्रकट हुआ, वह हमारा उद्धार कर देगा, ऐसा

जानकर प्रसन्न होकर नाचने लगते हैं और भी अनेक प्रमाण हैं। वास्तवमें ऐसे पुरुषका हृदय साक्षात् तीर्थ और उसका घर तीर्थरूप बन जाता है। अतएव सब भाइयोंको चाहिये कि वे परमात्माकी अनन्य भक्तिका साधन करें। इस साधनमें भगवान्‌के प्रति मन लगाना पड़ता है तथा अपना समय भगवत्-सेवामें लगानेका अभ्यास करना पड़ता है। इसके लिये यदि प्रत्येक घरमें एक-एक भगवान्‌की मूर्ति या चित्र रहे—मूर्ति या चित्र वही हो जो अपने मनको रुचता हो और नित्य नियमपूर्वक उसकी पूजा की जाय तो समय और मन दोनोंको ही परमात्मामें लगानेका अभ्यास अनायास हो सकता है।

भगवान्‌के अनेक मन्दिर हैं, मन्दिरोंमें जाना बड़ा उत्तम है, परन्तु एक तो सभी स्थानोंमें मन्दिर मिलते नहीं। दूसरे सभी जाकर अपनी इच्छाके

अनुसार अपने हाथों सेवा-पूजा नहीं कर सकते। तीसरे सब मन्दिरोंकी व्यवस्था आजकल प्रायः ठीक नहीं रही। चौथे घरके सब स्त्री-पुरुष, बालक-वृद्ध मन्दिरोंमें नियमितरूपसे जा भी नहीं सकते। परन्तु घरमें किसी धातुकी, पाषाणकी भगवान्‌की कोई मूर्ति या चित्र सभी रख सकते हैं और उसकी पूजा अपने-अपने मतके अनुसार या प्रेमभक्ति-प्रकाशमें बतलायी हुई विधिके अनुसार स्त्री-पुरुष सभी कर सकते हैं। घरमें नित्य भगवान्‌की पूजा होनेसे उसके लिये पूजाकी सामग्री जुटाने, पुष्पकी माला गूँथने आदिमें बहुत-सा समय एक तरहसे भगवत्-चिन्तनमें लग जाता है। बालकोंको भी इसमें बड़ा आनन्द मिलता है, वे भी इसको सीख जाते हैं। लड़कपनसे ही उनके हृदयमें भगवत्सम्बन्धी संस्कार जमने लगते हैं। व्यर्थके खेल-कूदकी बात भूलकर

उनका चित्त इसी सत्कार्यमें प्रमुदित होने लगता है। छोटी उम्रके संस्कार आगे चलकर बड़ा काम देते हैं। भक्तिमती मीराबाई आदिमें इस लड़कपनके मूर्तिपूजाके संस्कारसे ही बड़ी उम्रमें भक्तिका विकास हुआ था। जिन लोगोंने अपने घरोंमें इस कार्यका आरम्भ कर दिया है उनकी भगवान्‌में श्रद्धा, भक्ति और प्रेम उत्तरोत्तर बढ़ रहा है।

अतएव मैं सब भाइयोंसे, वेद, शास्त्र और पुराणादि न माननेवाले भाइयोंसे भी विनीतभावसे यह प्रार्थना करता हूँ कि यदि वे समझें तो अपने-अपने घरोंमें इस कामको तुरंत आरम्भ कर दें। भगवान्‌की पूजाके साथ ही घरके सब पुरुष, स्त्रियाँ और बालक मिलकर भगवान्‌का नाम लें। भगवान्‌की पूजा चाहे एक ही व्यक्ति करे पर पूजाका अधिकार सबको हो। स्वामी न हो तो स्त्री पूजा कर ले, स्त्री न कर सके तो पुरुष

कर ले। सारांश यह है कि भगवत्-पूजनमें नित्य कुछ-कुछ समय अवश्य लगता रहे। इससे घरभरमें श्रद्धा-भक्तिका विकास हो सकता है। जो लोग कर सकें वे बाह्य पूजाके साथ ही अपने-अपने सिद्धान्तके अनुसार या 'प्रेमभक्ति-प्रकाश'* के अनुसार भगवान्की मानसिक पूजा भी करें, क्योंकि आन्तरिक पूजाका महत्त्व और भी अधिक है। एक बार मेरी इस प्रार्थनापर ध्यान देकर इस पूजन-भक्तिका आरम्भ कर इसका फल तो देखें! इससे अधिक विश्वास दिलानेका मेरे पास और कोई साधन नहीं है।

---

*'प्रेमभक्ति-प्रकाश' नामक लेख अन्यत्र प्रकाशित है, इसकी अलग पुस्तक भी गीताप्रेस, गोरखपुरसे मिल सकती है।

ईश्वर सहायक हैं

भगवद्भक्तिके पथपर चलनेवाले पुरुषोंको अपने मनमें खूब उत्साह रखना चाहिये। इस बातका सदा स्मरण रखना चाहिये कि समस्त विघ्नोंको नाश करनेवाले और साधनमें सतत सहायता पहुँचानेवाले भगवान् हमारे पीछे स्थित रहकर सदा हमारी रक्षा करते हैं। रणांगणमें रण–प्रवृत्त योद्धाके मनमें इस स्मृतिसे महान् उत्साह बना रहता है कि मेरे पीछे विशाल सैन्यको साथ लिये सेनापति स्थित है। भक्तको तो इससे भी अनन्तगुना अधिक उत्साह होना चाहिये, क्योंकि उसके पीछे अनन्त शक्ति–सम्पन्न भगवान्का बल है। शक्तिशाली सैन्यका सहारा पाकर जब निर्बल भी बलवान् बन जाता है, जब कायर भी शूरवीरका–सा काम कर दिखाता है। निर्बल,

निरुत्साही मनुष्य इस बातको भलीभाँति समझता हुआ कि मुझमें बड़ी भारी शत्रु-सेनाका सामना करनेकी शक्ति नहीं है, किन्तु शत्रु-सेनाकी अपेक्षा अपनी सेनाको अधिक बलवती देखकर उसके भरोसे लड़नेको तैयार हो जाता है। फिर, जिसके भगवान् सहायक हों, उसको तो भीषण विषय-सैन्यको तुच्छ समझकर उसके नाशके लिये बद्ध-परिकर ही हो जाना चाहिये। परमात्मा श्रीकृष्ण अपने प्रेमी भक्तोंको आश्वासन देते हुए घोषणा करते हैं—

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥

(गीता ९।२२)

'जो अनन्यभावसे मुझमें स्थित हुए भक्तजन मुझ परमेश्वरको निरन्तर चिन्तन करते हुए निष्कामभावसे भजते हैं, उन नित्य एकीभावसे

मुझमें स्थितिवाले पुरुषोंका योग-क्षेम मैं स्वयं प्राप्त कर देता हूँ।'

भगवान्‌की इस घोषणापर विश्वासकर कठिन-से-कठिन मार्गपर अग्रसर होनेमें भी संकोच नहीं करना चाहिये। शंख, चक्र, गदा आदि धारण करनेवाले भगवान् जब हमारे प्राप्त साधनकी रक्षा और अप्राप्तकी प्राप्ति करानेका स्वयं जिम्मा ले रहे हैं, जब पद-पदपर हमें बचानेके लिये तैयार हैं, तब इस घोर अन्धकारमय संसार-अरण्यसे बाहर निकलनेके लिये हमने जिस साधनामय पथका अवलम्बन किया है, उसमें विघ्न करनेवाले काम-क्रोधरूप सिंह-व्याघ्रादिसे भय करनेकी क्या आवश्यकता है? जब भगवान् सदा-सर्वदा हमारे साथ हैं तब भय किस बातका? जैसे छोटा बालक माताकी गोदमें आते ही

अपनेको निर्भय और निश्चिन्त मानता है, इसी प्रकार हमें भी अपनेको परमपिता परमात्माकी गोदमें स्थित समझकर निर्भय और निश्चिन्त रहना चाहिये। भगवान् तो बल, प्रेम, सुहृदता आदिमें सभी प्रकार सबसे अधिक हैं। कारण, ये सारे सद्‌गुण उन्हीं गुणसागरके तो गुण-कण हैं अतएव सब तरहके शोक, भय आदिको त्यागकर, बड़े उत्साह और उमंगके साथ एक वीरकी भाँति अपने अभीष्ट मार्गपर द्रुतगतिसे अग्रसर होना चाहिये। यह सदा स्मरण रखना चाहिये कि जिस प्रकार भक्तप्रवर अर्जुनने भगवान्‌की सहायतासे भीष्म, द्रोण, कर्णादिद्वारा सुरक्षित ग्यारह अक्षौहिणी कौरव-सेनाको विध्वंसकर विजय प्राप्त की थी, उसी प्रकार उसकी सहायतासे हम भी काम-क्रोधादिरूप कौरव-

सेनाका सहजहीमें विनाशकर परमात्माकी प्राप्तिरूप सच्चे स्वराज्यको प्राप्त कर सकते हैं। बस, भगवान्‌को अपना सच्चा अवलम्बन बनाकर भीमार्जुनकी भाँति प्राणविसर्जनतकका प्रणकर भगवदाज्ञानुसार कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण होनेभरकी देर है।